अध्यात्म और विज्ञान

औपनिषदिक ऋषिगण, बुद्ध और महावीर भारतीय अध्यात्म परम्परा के उन्नायक रहे हैं। उनके आध्यात्मिक चिन्तन ने भारतीय मानस को आत्मतोष प्रदान किया है। किन्तु आज हम विज्ञान के युग में जी रहे हैं। वैज्ञानिक उपलब्धियाँ आज हमें उद्वेलित कर रही हैं। आज का मनुष्य दो तलों पर जीवन जी रहा है। यदि विज्ञान को नकारता है तो जीवन की सुख-सुविधा और समृद्धि के खोने का खतरा है, दूसरी ओर अध्यात्म को नकारने पर आत्म-शान्ति से वंचित होता है। आज आवश्यकता है इन ऋषि-महर्षियों द्वारा प्रतिस्थापित आध्यात्मिक मूल्यों और आधुनिक विज्ञान की उपलब्धियों के समन्वय की। निश्चय ही 'विज्ञान और अध्यात्म' की चर्चा आज प्रासंगिक है।

सामान्यतया आज विज्ञान और अध्यात्म को परस्पर विरोधी अवधारणाओं के रूप में देखा जाता है। आज जहाँ अध्यात्म को धर्मवाद और पारलौकिकता के साथ जोड़ा जाता है, वहाँ विज्ञान को भौतिकता और इहलौकिकता के साथ जोड़ा जाता है। आज दोनों में विरोध देखा जाता है, लेकिन यह अवधारणा ही भ्रान्त है। प्राचीन युग में तो विज्ञान और अध्यात्म ये शब्द भी परस्पर भिन्न अर्थ के बोधक नहीं थे। महावीर ने आचारांगसूत्र में कहा है कि "जो आत्मा है वही विज्ञाता है और जो विज्ञाता है वही आत्मा है।"[१] यहाँ आत्मज्ञान और विज्ञान एक ही हैं। वस्तुतः 'विज्ञान' शब्द वि + ज्ञान से बना है, 'वि' उपसर्ग विशिष्टता का द्योतक है। अतः विशिष्ट ज्ञान ही विज्ञान है। आज जो विज्ञान शब्द केवल पदार्थ ज्ञान के रूप में रूढ़ हो गया है वह मूलतः विशिष्ट ज्ञान या आत्म-ज्ञान ही था। आत्म-ज्ञान ही विज्ञान है। पुनः 'अध्यात्म' शब्द भी अधि-+ आत्म से बना है। 'अधि' उपसर्ग भी विशिष्टता का ही सूचक है। जहाँ आत्म की विशिष्टता है, वही अध्यात्म है। चूँकि आत्मा ज्ञानस्वरूप ही है, अतः ज्ञान की विशिष्टता ही अध्यात्म है और वही विज्ञान है। फिर भी आज विज्ञान पदार्थ-ज्ञान में और अध्यात्म आत्म-ज्ञान के अर्थ में रूढ़ हो गया है। मेरी दृष्टि में विज्ञान साधनों का ज्ञान है तो अध्यात्म साध्य का ज्ञान। प्रस्तुत निबन्ध में इन्हीं रूढ़ अर्थों में विज्ञान और अध्यात्म शब्द का प्रयोग किया जा रहा है। एक हमें बाह्य जगत् से जोड़ता है तो दूसरा हमें अपने से जोड़ता है। दोनों ही 'योग' हैं। एक साधन योग है, तो दूसरा साध्ययोग। एक हमें जीवन शैली (Life style) देता है तो दूसरा हमें जीवन साध्य (Goal of

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

life) देता है। आज हमारा दुर्भाग्य यही है कि जो एक दूसरे के पूरक हैं, उन्हें हमने एक दूसरे का विरोधी मान लिया। आज आवश्यकता इस बात की है कि इनकी परस्पर पूरक शक्ति या अभिन्नता को समझा जाये।

धर्म-शब्द के तीन अर्थ हैं — १. स्वभाव, २. कर्त्तव्य और ३. साधना या उपासना की प्रक्रिया विशेष अथवा श्रद्धा-विशेष। अपने पहले अर्थ में वह विज्ञान से सम्बन्धित है। जहाँ धर्म वस्तु-स्वभाव है वहाँ विज्ञान वस्तु-स्वभाव (Nature of things) के अध्ययन करने की पद्धति है। अत: वे एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। धर्म स्वभाव में जीना है और विज्ञान उस स्वभाव को पहचानना है। अत: विज्ञान के बिना धर्म असम्भव है। स्वभाव को जानकर ही जीया जा सकता है । विज्ञान हमें स्व-स्वभाव का बोध कराता है और धर्म विभाव से स्वभाव में आने की प्रक्रिया सिखाता है। धर्म अपने दूसरे और तीसरे अर्थ में अध्यात्म के निकट है और इस अर्थ में उसे विज्ञान निरपेक्ष कहा जा सकता है। क्योंकि कर्त्तव्य की अवधारणा भी विज्ञान-विहीन है। कर्त्तव्य भी व्यक्ति के स्वभाव और परिवेश के सन्दर्भ में ही निर्धारित होता है। किस परिस्थिति में किस व्यक्ति को क्या करना है — इसका निर्णय वैज्ञानिक दृष्टि पर ही निर्भर करता है। यद्यपि धर्म और विज्ञान में इस बात को लेकर अन्तर माना जाता है कि जहाँ धर्म श्रद्धाप्रधान है, वहाँ विज्ञान तर्कप्रधान है। किन्तु यह एक भ्रान्त धारणा है क्योंकि न तो विज्ञान श्रद्धा या आस्था का विरोधी है और न धर्म ही तर्क का विरोधी। विज्ञान में हम प्रारम्भ, परिकल्पना (Hypothesis) या आस्था से करते हैं तो धर्म में तर्क को स्थान देकर उसे वैज्ञानिक बनाना चाहते हैं। अत: दोनों में विरोध नहीं है। आज धर्म को वैज्ञानिक (Scientific) होना होगा और विज्ञान को धार्मिक।

पुन: धर्म को पारलौकिक और विज्ञान को आनुभविक (ऐहिक) माना जाता है, किन्तु यह भ्रान्त धारणा है। बुद्ध ने अपने उपदेश में अजातशत्रु को कहा था — मैं किसी पारलौकिक धर्म की बात नहीं कहता। मैं जिस धर्म को सिखाता हूँ, वह तो तात्कालिक है। क्रोध नहीं करने से जो शान्ति आती है — वह तो तात्कालिक है। आज धर्म को स्वर्ग और नरक के प्रलोभन और भय पर नहीं सिखाया जा सकता है। आज धर्म को ऐहिक जीवन से जोड़ना होगा, विज्ञान को परमार्थ (Transcendental) की खोज करनी होगी।

आज धर्म को कर्मकाण्ड से जोड़ लिया गया है, किन्तु अब समय आ गया है, जब विज्ञान की सहायता से इन कर्मकाण्डों की ऐहिक उपयोगिता को खोजना होगा। अब धर्म और विज्ञान समन्वित होकर ही मानव कल्याण की दिशा में आगे बढ़ सकते हैं। आज धर्म कर्मकाण्ड और अन्ध श्रद्धा से इतना जुड़ गया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है कि वे ही धर्म के पर्याय बन गये हैं। 'धर्म' शब्द से कोई भ्रान्ति न हो इसलिये 'धर्म' के स्थान पर 'अध्यात्म' शब्द का प्रयोग अधिक उपयोगी होगा।

आज हम विज्ञान को पदार्थ विज्ञान मानते हैं। हमने 'पर' या 'अनात्म' के सन्दर्भ में इतना अधिक ज्ञान अर्जित कर लिया है कि 'स्व' या 'आत्म' को विस्मृत कर बैठे हैं। हमने परमाणु के आवरण को तोड़कर उसके जर्रे-जर्रे को जानने का प्रयास किया है किन्तु दुर्भाग्य यही है कि अपनी आत्मा के आवरण को भेदकर अपने आपको नहीं जान सके हैं। हम परिधि को व्यापकता देने में केन्द्र ही भुला बैठे। मनुष्य की यह परकेन्द्रितता ही उसे अपने आपसे बहुत दूर ले गई है। यही आज के जीवन की त्रासदी है। वह दुनिया को समझता है, जानता है, परखता है, किन्तु अपने प्रति तन्द्राग्रस्त है। उसे स्वयं यह बोध नहीं है कि मैं कौन हूँ? मेरा कर्त्तव्य क्या है? लक्ष्य क्या है? वह भटक रहा है। मात्र भटक रहा है। आज से २५०० वर्ष पूर्व महावीर ने मनुष्य की उस पीड़ा को समझा था। उन्होंने कहा था कि कितने ही लोग ऐसे हैं जो नहीं जानते कि मैं कौन हूँ? कहाँ से आया हूँ? मेरा गन्तव्य क्या है[१]? यह केवल महावीर ने कहा हो ऐसी बात नहीं है। बुद्ध ने भी कहा था 'अत्तानं गवेस्सेथ' अपने को खोजो। औपनिषदिक ऋषियों ने कहा — 'आत्मनं विद्धि' 'अपने आपको जानो', यही जीवन-परिशोधन का मूल मन्त्र है। आज हमें पुनः इन्हीं प्रश्नों के उत्तर को खोजना है। आज का विज्ञान आपको पदार्थ जगत् के सन्दर्भ में सूक्ष्मतम सूचनाएँ दे सकता है किन्तु वे सूचनाएँ हमारे लिये ठीक उसी तरह अर्थहीन हैं जिस प्रकार जब तक आँख न खुली हो, तब तक प्रकाश का कोई मूल्य नहीं। विज्ञान प्रकाश है किन्तु अध्यात्म की आँख के बिना उसकी कोई सार्थकता नहीं है। आचार्य भद्रबाहु ने कहा था कि अन्धे व्यक्ति के सामने करोड़ों दीपक जलाने का क्या लाभ? जिसकी आँखें खुली हों उसके लिये एक ही दीपक पर्याप्त है। आज के मनुष्य की भी यही स्थिति है। वह विज्ञान और तकनीकी के सहारे बाह्य जगत् में विद्युत की चकाचौंध फैला रहा है किन्तु अपने अन्तर्चक्षु का उन्मीलन नहीं कर रहा है। प्रकाश की चकाचौंध में हम अपने को ही नहीं देख पा रहे हैं। यह सत्य है कि प्रकाश आवश्यक है किन्तु आँखें खोले बिना उसका कोई मूल्य नहीं है। विज्ञान ने मनुष्य को शक्ति दी है। आज वह ध्वनि से भी अधिक तीव्र गति से यात्रा कर सकता है। किन्तु स्मरण रहे कि विज्ञान जीवन के लक्ष्य का निर्धारण नहीं कर सकता। लक्ष्य का निर्धारण तो अध्यात्म ही कर सकता है। विज्ञान साधन देता है, लेकिन उसका उपयोग किस दिशा में करना होगा यह बतलाना अध्यात्म का कार्य है। पूज्य विनोबा जी के शब्दों में, "विज्ञान में दोहरी शक्ति होती है, एक विनाश शक्ति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और दूसरी विकास शक्ति। वह सेवा भी कर सकता है और संहार भी। अग्नि नारायण की खोज हुई तो उससे रसोई भी बनायी जा सकती है और उससे आग भी लगाई जा सकती है। अग्नि का प्रयोग घर फूँकने में करना या चूल्हा जलाने में, यह अक्ल विज्ञान में नहीं है। अक्ल तो आत्म-ज्ञान में है।''[३] आगे वे कहते हैं — ''आत्मज्ञान है आँख और विज्ञान है पाँव। अगर मानव को आत्मज्ञान नहीं तो वह अन्धा है। कहाँ चला जायेगा कुछ पता नहीं।''[४] दूसरे शब्दों में कहें, तो अध्यात्म देखता तो है लेकिन चल नहीं सकता अर्थात् उसमें लक्ष्य-बोध तो है किन्तु गति की शक्ति नहीं। विज्ञान में शक्ति तो है किन्तु आँख नहीं है, लक्ष्य का बोध नहीं। जिस प्रकार अन्धे और लँगड़े दोनों ही परस्पर सहयोग के अभाव में दावानल में जल मरते हैं, ठीक उसी प्रकार यदि आज विज्ञान और अध्यात्म परस्पर एक दूसरे के पूरक नहीं होंगे तो मानवता अपने ही द्वारा लगाई गई विस्फोटक शस्त्रों की इस अग्नि में जल मरेगी। बिना विज्ञान के संसार में सुख नहीं आ सकता और बिना अध्यात्म के शान्ति नहीं आ सकती। मानव समाज की सुख (Pleasure) और शान्ति (Peace) के लिये दोनों का परस्पर होना आवश्यक है। वैज्ञानिक शक्तियों का उपयोग मानव-कल्याण में हो या मानव-संहार में, इस बात का निर्धारण विज्ञान से नहीं, आत्मज्ञान या अध्यात्म से करना होगा। अणु शक्ति का उपयोग मानव के संहार में हो या मानव के कल्याण में, यह निर्णय करने का अधिकार उन वैज्ञानिकों को भी नहीं है, जो सत्ता, स्वार्थ और समृद्धि के पीछे अन्धे राजनेताओं के दास हैं। यह निर्णय तो मानवीय विवेक सम्पन्न निःस्पृह साधकों को ही करना होगा। यह सत्य है कि विज्ञान के सहयोग से तकनीक का विकास हुआ और उसने मानव के भौतिक दुःखों को बहुत कुछ कम कर दिया, किन्तु दूसरी ओर उसने मारक शक्ति के विकास के द्वारा भय या संत्रास की स्थिति उत्पन्न कर मानव की शान्ति को भी छीन लिया है। आज मनुष्य जाति भयभीत और संत्रस्त है। आज वह विस्फोटक अस्त्रों के ज्वालामुखी पर खड़ी है, जो कब विस्फोट कर हमारे अस्तित्व को निगल लेगी, यह कहना कठिन है। आज हमारे पास जिन संहारक अस्त्रों का संग्रह है, वे पृथ्वी के सम्पूर्ण जीवन को अनेक बार समाप्त कर सकते हैं।

पूज्य विनोबाजी लिखते हैं, ''जो विज्ञान एक ओर क्लोरोफार्म की खोज करता है जिससे करुणा का कार्य होता है, वही विज्ञान अणु अस्त्रों की खोज करता है जिससे भयंकर संहार होता है। एक बाजू सिपाही को जख्मी करता है दूसरा बाजू उसको दुरुस्त करता है, यह गोरखधन्धा आज विज्ञान की मदद से चल रहा है। इस हालत में विज्ञान का सारा कार्य उसको मिलने वाले मार्गदर्शन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पर आधारित है। उसे जैसा मार्गदर्शन मिलेगा, वह वैसा कार्य करेगा।[५]

यदि विज्ञान पर सत्ता के आकांक्षियों का, राजनीतिज्ञों का और अपने स्वार्थ की रोटी सेंकने वालों का अधिकार होगा तो वह मनुष्य जाति का संहारक ही बनेगा। किन्तु इसके विपरीत यदि विज्ञान पर मानव-मंगल के द्रष्टा अनासक्त ऋषियों-महर्षियों का अधिकार होगा, तो वह मानव के विकास में सहायक होगा। आज हम विज्ञान के माध्यम से तकनीकी प्रगति की उस ऊँचाई तक पहुँच चुके हैं जहाँ से लौटना भी सम्भव नहीं है। आज मनुष्य उस दोराहे पर खड़ा है जहाँ पर उसे हिंसा और अहिंसा के दो रास्तों में से किसी एक को चुनना है। आज उसे यह समझना है कि वह विज्ञान के साथ किसको जोड़ना चाहता है, हिंसा को या अहिंसा को। आज उसके सामने दोनों विकल्प प्रस्तुत हैं। विज्ञान + अहिंसा = विकास। विज्ञान + हिंसा = विनाश। जब विज्ञान अहिंसा के साथ जुड़ेगा तो वह समृद्धि और शान्ति लायेगा किन्तु जब उसका गठबन्धन हिंसा से होगा तो संहारक होगा और अपने ही हाथों अपना विनाश करेगा।

आज विज्ञान के सहारे मनुष्य ने जितना पाशविक बल संगृहीत कर लिया है। वह उसका रक्षक न होकर कहीं भक्षक न बन जाय, यह उसे सोचना है। महावीर ने स्पष्ट रूप से कहा था "अत्थि सत्थेन परंपरं, नत्थि असत्थेन परंपरं"[६], अर्थात् शस्त्र एक से बढ़कर एक हो सकता है किन्तु अहिंसा से बढ़कर अन्य कुछ नहीं हो सकता। आज सम्पूर्ण मानव समाज को यह निर्णय लेना होगा कि वे वैज्ञानिक शक्तियों का प्रयोग मानवता के कल्याण के लिए करना चाहते हैं या उसके संहार के लिए। आज तकनीकी प्रगति के कारण मनुष्य-मनुष्य के बीच की दूरी कम हो गई है। आज विज्ञान ने मानव-समाज को एक दूसरे के निकट लाकर खड़ा कर दिया है। आज हम परस्पर इतने निर्भर बन गये हैं कि एक दूसरे के बिना खड़े भी नहीं रह सकते, किन्तु दूसरी ओर आध्यात्मिक दृष्टि के अभाव के कारण हमारे हृदयों की दूरी अधिक विस्तीर्ण हो गई है। हृदय की इस दूरी को पाटने का काम विज्ञान नहीं, अध्यात्म ही कर सकता है।

विज्ञान का कार्य है — विश्लेषित करना और अध्यात्म का काम है — संश्लेषित करना। विज्ञान तोड़ता है, अध्यात्म जोड़ता है। विज्ञान वियोजक है तो अध्यात्म संयोजक। विज्ञान पर-केन्द्रित है तो अध्यात्म आत्म-केन्द्रित। विज्ञान सिखाता है कि हमारे सुख-दुःख का केन्द्र वस्तुएँ हैं, पदार्थ हैं, इसके विपरीत अध्यात्म कहता है कि सुख-दुःख का केन्द्र आत्मा है। विज्ञान की दृष्टि बाहर देखती है, अध्यात्म अन्तर में देखता है। विज्ञान की यात्रा अन्दर से बाहर की ओर है तो अध्यात्म की यात्रा बाहर से अन्दर की ओर। मनुष्य को आज यह समझना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है कि यदि यात्रा बाहर की ओर होती रही तो वह शान्ति, जिसकी उसे खोज है, कभी नहीं मिलेगी। क्योंकि बहिर्मुखी यात्री शान्ति की खोज वहाँ करता है जहाँ वह नहीं है। शान्ति अन्दर है उसकी खोज बाहर व्यर्थ है।

इस सम्बन्ध में एक रूपक याद आता है — एक वृद्धा शाम के समय कुछ सिल रही थी। संयोग से अँधेरा बढ़ने लगा, सूई उसके हाथ से छूटकर कहीं गिर पड़ी। महिला की झोपड़ी में प्रकाश का साधन नहीं था और प्रकाश के बिना सूई की खोज असम्भव थी। बुढ़िया ने सोचा क्या हुआ। अगर प्रकाश बाहर है तो सूई को वहीं खोजा जाये। वह उस प्रकाश में सूई खोजती रही, खोजती रही किन्तु सूई वहाँ कब मिलने वाली थी, क्योंकि वह वहाँ थी ही नहीं। प्रातः होने वाला था कि कोई यात्री उधर से निकला, उसने वृद्धा से उसकी परेशानी का कारण पूछा। उसने पूछा अम्मा सूई गिरी कहाँ थी। वृद्धा ने उत्तर दिया, 'बेटा ! सूई गिरी तो झोपड़ी में थी किन्तु उजाला नहीं था, अतः खोजना सम्भव नहीं था। उजाला तो बाहर था, इसलिये मैं यहाँ खोज रही थी।' यात्री ने उत्तर दिया — "यह सम्भव नहीं है कि जो चीज जहाँ नहीं है वहाँ खोजने पर मिल जाये। सूर्य का प्रकाश होने को है, उस प्रकाश में सूई वहीं खोजें जहाँ गिरी है।" आज मानव-समाज की स्थिति भी उसी वृद्धा के समान है। हम शान्ति की खोज वहाँ कर रहे हैं जहाँ वह होती ही नहीं। शान्ति आत्मा में है, अन्दर है? विज्ञान के सहारे आज शान्ति की खोज के प्रयत्न उस बुढ़िया के प्रयत्नों के समान निरर्थक ही होंगे। विज्ञान, साधन दे सकता है, शक्ति दे सकता है किन्तु लक्ष्य का निर्धारण तो हमें ही करना होगा।

आज विज्ञान के कारण मानव के पूर्व स्थापित जीवन-मूल्य समाप्त हो गये हैं। आज श्रद्धा का स्थान तर्क ने ले लिया है। आज मनुष्य पारलौकिक उपलब्धियों के स्थान पर इहलौकिक उपलब्धियों को चाहता है। आज के तर्क-प्रधान मनुष्य को सुख और शान्ति के नाम पर बहलाया नहीं जा सकता, लेकिन दुर्भाग्य यह है कि आज हम अध्यात्म के अभाव में नये जीवन-मूल्यों का सृजन नहीं कर पा रहे हैं। आज विज्ञान का युग है। आज उस धर्म को जो, पारलौकिक जीवन की सुख-सुविधाओं के नाम पर मानवीय भावनाओं का शोषण कर रहा है, जाना होगा। आज तथाकथित वे धर्म-परम्परायें जो मनुष्य को भविष्य के सुनहले सपने दिखाकर फुसलाया करती थीं अब तर्क की पैनी छेनी के आगे अपने को नहीं बचा सकतीं। अब स्वर्ग में जाने के लिये नहीं जीना है अपितु स्वर्ग को धरती पर लाने के लिये जीना होगा। आज विज्ञान ने हमें वह शक्ति दे दी है, जब स्वर्ग को धरती पर उतारा जा सकता है। यदि हम इस शक्ति का उपयोग धरती पर स्वर्ग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उतारने के स्थान पर, धरती को नरक बनाने में करेंगे तो इसकी जवाबदेही हम पर ही होगी। आज वैज्ञानिक शक्तियों का उपयोग इस दृष्टि से करना है कि वे मानव कल्याण में सहभागी बनकर इस धरती को ही स्वर्ग बना सकें। विनोबा जी ने सत्य ही कहा है, "आज विज्ञान का तो विकास हुआ किन्तु वैज्ञानिक उत्पन्न ही नहीं हुआ।" क्योंकि वैज्ञानिक वह है जो निरपेक्ष होता है। आज का वैज्ञानिक, राजनीतिज्ञों और पूँजीपतियों के इशारे पर चलने वाला व्यक्ति है। वह पैसे से खरीदा जा सकता है। यह तो वैज्ञानिक की गुलामी है। ऐसे लोग अवैज्ञानिक हैं। यदि विज्ञानी (Scientist) वैज्ञानिक (Scientific) नहीं बना तो विज्ञान मनुष्य के लिए घातक ही सिद्ध होगा। आज विज्ञान का उपयोग कैसे किया जाय, इसका उत्तर विज्ञान के पास नहीं, अध्यात्म के पास है। विनोबा जी लिखते हैं कि आज युग की माँग से विज्ञान की जितनी ही शक्ति बढ़ेगी, आत्म-ज्ञान को उतनी ही शक्ति बढ़ानी होगी। आज अमेरिका इसलिये दु:खी है कि वहाँ विज्ञान तो है, पर अध्यात्म नहीं है, अत: वहाँ सुख तो है शान्ति नहीं। इसके विपरीत भारत में आध्यात्मिक विरासत के कारण मानसिक शान्ति तो है, किन्तु समृद्धि नहीं। आज जहाँ समृद्धि है वहाँ शान्ति नहीं और जहाँ शान्ति है वहाँ समृद्धि नहीं। इसका समाधान अध्यात्म और विज्ञान के समन्वय में निहित है। अध्यात्म शान्ति देगा तो विज्ञान समृद्धि। जब समृद्धि और शान्ति दोनों एक साथ उपस्थित होगी तभी मानवता अपने विकास के चरम शिखर पर होगी, मानव स्वयं अतिमानव के रूप में विकसित हो जायगा। किन्तु इसके लिए प्रयत्न करना होगा। बिना अडिग आस्था और सतत पुरुषार्थ के यह सम्भव नहीं।

आज विज्ञान ने मनुष्य को सुख-सुविधा और समृद्धि तो प्रदान कर दी है फिर भी मनुष्य भय और तनाव की स्थिति में जी रहा है। उसे आन्तरिक शान्ति उपलब्ध नहीं है, उसकी समाधि भंग हो चुकी है। यदि विज्ञान के माध्यम से कोई शान्ति आ सकती है तो वह केवल श्मशान की शान्ति ही होगी। बाहरी साधनों से न कभी आन्तरिक शान्ति मिली है न उसका मिलना सम्भव ही है। इस सन्दर्भ में उपनिषदों का एक प्रसंग याद आ रहा है। नारद जीवन भर वेद-वेदांग का अध्ययन करते रहे। उन्होंने अनेक विद्याएँ (भौतिक विद्याएँ) प्राप्त कर लीं किन्तु उनके मन को कहीं सन्तोष नहीं मिला। वे सनत्कुमार के पास आए और कहने लगे — मैंने अनेक शास्त्रों का अध्ययन किया। मैं शास्त्रविद् तो हूँ किन्तु आत्म-विद् नहीं।* आज के वैज्ञानिक भी नारद की भाँति ही हैं। वे शास्त्रविद् तो हैं किन्तु आत्मविद् नहीं। आत्मविद् हुए बिना शान्ति को नहीं पाया जा सकता। यद्यपि मेरे कहने का तात्पर्य यह नहीं है कि हम विज्ञान और उसकी उपलब्धियों को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिलांजलि दे दें। वैज्ञानिक उपलब्धियों का परित्याग न तो सम्भव ही है और न ही औचित्यपूर्ण, किन्तु अध्यात्म या मानवीय विवेक को इनका अनुशासक होना चाहिये। अध्यात्म ही विज्ञान का अनुशासक हो, तभी एक समग्रता या पूर्णता आएगी और मनुष्य एक साथ समृद्धि और शान्ति को पा सकेगा। ईशावास्योपनिषद् में जिसे हम पदार्थ-ज्ञान या विज्ञान कहते हैं उसे अविद्या कहा गया है और जिसे हम अध्यात्म कहते हैं उसे विद्या कहा गया है। उपनिषद्कार दोनों के सम्बन्ध को उचित बताते हुए उसका स्वरूप कहता है। वह कहता है कि जो पदार्थ विज्ञान या अविद्या की उपासना करता है, वह अन्धकार (तमस्) में प्रवेश करता है क्योंकि विज्ञान या पदार्थ विज्ञान अन्धा है किन्तु साथ ही वह यह भी चेतावनी देता है कि जो केवल विद्या में रत हैं वे उससे अधिक अन्धकार में चले जाते हैं।

अन्धं तमः प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते ।
ततो भूय इव ते ततो य उ विद्यायां रताः ।। ९ ।।

ईशावास्योपनिषद्

वस्तुतः वह जो अविद्या और विद्या दोनों की एक साथ उपासना करता है वह अविद्या द्वारा मृत्यु को पार करता है अर्थात् वह सांसारिक कष्टों से मुक्ति पाता है और विद्या द्वारा अमृत प्राप्त करता है।

विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयं सह ।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते ।। ११ ।।

ईशावास्योपनिषद्

वस्तुतः यह अमृत आत्म-शान्ति या आत्मतोष ही है। जब विज्ञान और अध्यात्म का समन्वय होगा तभी मानवता का कल्याण होगा। विज्ञान जीवन के कष्टों को समाप्त कर देगा और अध्यात्म आन्तरिक शान्ति को प्रदान करेगा। आचारांग में महावीर ने अध्यात्म के लिए 'अज्झत्थ' शब्द का प्रयोग किया है और यह बताया है कि इसी के द्वारा आत्म-विशुद्धि को प्राप्त किया जा सकता है। वस्तुतः अध्यात्म कुछ नहीं है वह आत्म-उपलब्धि या आत्म-विशुद्धि की ही एक प्रक्रिया है। उसका प्रारम्भ आत्मज्ञान से है और उसकी परिनिष्पत्ति आध्यात्मिक मूल्यों के प्रति अटूट निष्ठा में है। वस्तुतः आज जितनी मात्रा में पदार्थ विज्ञान विकसित हुआ है उतनी ही मात्रा में आत्मज्ञान को विकसित होना चाहिए। विज्ञान की दौड़ में अध्यात्म पीछे रह गया है। पदार्थ को जानने के प्रयत्नों में हम अपने को भुला बैठे हैं। मेरी दृष्टि में आत्मज्ञान कोई अमूर्त, तात्त्विक आत्मा की खोज नहीं है, वह अपने आपको जानना है। अपने आपको जानने का तात्पर्य अपने में निहित वासनाओं और विकारों को देखना है। आत्मज्ञान का अर्थ होता है कि हम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यह देखें कि हमारे जीवन में कहाँ अहंकार छिपा पड़ा है, कहाँ और किसके प्रति घृणा और विद्वेष के तत्त्व पल रहे हैं। वस्तुत: आत्मज्ञान, अपने अन्दर झाँककर अपनी वृत्तियों और वासनाओं को पढ़ने की कला है। विज्ञान द्वारा प्रदत्त तकनीक के सहारे हम पदार्थों का परिशोधन करना तो सीख गये और परिशोधन से कितनी शक्ति प्राप्त होती है यह भी जान गए, किन्तु आत्मा के परिशोधन की जो कला अध्यात्म के नाम से हमारे ऋषि-मुनियों ने दी थी, आज हम उसे भूल चुके हैं।

फिर भी विज्ञान ने आज हमारी सुख-सुविधा प्रदान करने के अतिरिक्त जो सबसे बड़ा उपकार किया वह यह कि धर्मवाद के नाम पर जो अन्ध श्रद्धा और अन्धविश्वास पल रहे थे, उन्हें तोड़ दिया है। इसका टूटना आवश्यक भी था क्योंकि लोरी सुनाकर मनुष्य समाज को अधिक समय तक भ्रम में रखना सम्भव नहीं था। विज्ञान ने अच्छा ही किया कि हमारा यह भ्रम तोड़ दिया किन्तु हमें यह भी स्मरण रखना होगा कि भ्रम का टूटना ही पर्याप्त नहीं है। इससे जो रिक्तता पैदा हुई उसे आध्यात्मिक मूल्य-निष्ठा के द्वारा ही भरना होगा। यह आध्यात्मिक मूल्य निष्ठा उच्च मूल्यों के प्रति निष्ठा है जो जीवन को शान्ति और आत्मसन्तोष प्रदान करते हैं।

अध्यात्म और विज्ञान का संघर्ष वस्तुत: भौतिकवाद और अध्यात्मवाद का संघर्ष है। अध्यात्म की शिक्षा यही है कि भौतिक सुख-सुविधाओं की उपलब्धि ही अन्तिम लक्ष्य नहीं है। दैहिक एवं आत्मिक मूल्यों से परे सामाजिकता और मानवता के उच्च मूल्य भी हैं। महावीर की दृष्टि में अध्यात्मवाद का अर्थ है पदार्थ को परममूल्य न मानकर आत्मा को ही परममूल्य मानना। भौतिकवादी दृष्टि के अनुसार सुख और दु:ख वस्तुगत तथ्य हैं। अत: भौतिकवादी सुखों की लालसा में वह वस्तुओं के पीछे दौड़ता है और उनकी उपलब्धि हेतु शोषण और संग्रह जैसी सामाजिक बुराइयों को जन्म देता है जिससे वह स्वयं तो सन्त्रस्त होता ही है साथ ही साथ समाज को भी सन्त्रस्त बना देता है। इसके विपरीत अध्यात्मवाद हमें यह सिखाता है कि सुख दु:ख आत्म-केन्द्रित हैं। आत्मा या व्यक्ति ही अपने सुख-दु:ख का कर्त्ता और भोक्ता है। वही अपना मित्र और वही अपना शत्रु है। सुप्रतिष्ठित अर्थात् सद्गुणों में स्थित आत्मा मित्र है और दु:प्रतिष्ठित अर्थात् दुर्गुणों में स्थित आत्मा शत्रु है।[८] वस्तुत: आध्यात्मिक आनन्द की उपलब्धि पदार्थों में न होकर सद्गुणों में स्थित आत्मा में होती है। अध्यात्मवाद के अनुसार देहादि सभी आत्मेतर पदार्थों के प्रति ममत्व बुद्धि का विसर्जन साधना का मूल उत्स है। ममत्व का विसर्जन और समत्व का सृजन ही जीवन का परममूल्य है। जैसे ही ममत्व का विसर्जन होगा समत्व का सृजन होगा और समत्व का सृजन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होगा तो शोषण और संग्रह की सामाजिक बुराइयाँ समाप्त होंगी। परिणामत: व्यक्ति आत्मिक शान्ति का अनुभव करेगा। अध्यात्मवादी समाज में विज्ञान तो रहेगा किन्तु उसका उपयोग संहार में न होकर सृजन में होगा, मानवता के कल्याण में होगा।

अन्त में पुन: मैं यही कहना चाहूँगा कि विज्ञान के कारण जो एक संत्रास की स्थिति मानव-समाज में दिखाई दे रही है उसका मूलभूत कारण विज्ञान नहीं अपितु व्यक्ति की संकुचित और स्वार्थवादी दृष्टि ही है। विज्ञान तो निरपेक्ष है। वह न अच्छा है और न बुरा। उसका अच्छा या बुरा होना उसके उपयोग पर निर्भर करता है और इस उपयोग का निर्धारण व्यक्ति के अधिकार की वस्तु है। अत: आज विज्ञान को नकारने की आवश्यकता नहीं है। आवश्यकता है उसे सम्यक् दिशा में नियोजित करने की। यह सम्यक् दिशा अन्य कुछ नहीं, सम्पूर्ण मानवता के कल्याण की व्यापक आकांक्षा ही है और इस आकांक्षा की पूर्ति अध्यात्म और विज्ञान के समन्वय में ही है। काश, मानवता इन दोनों में समन्वय कर सके, यही कामना है।

सन्दर्भ

१. जे आया से विण्णाया, जे विण्णाया से आया। आचारांग १/५/५.
२. आचारांग, १/१/१.
३. आत्मज्ञान और विज्ञान (विनोबा).
४. वही.
५. वही.
६. आचारांग १/३/४.
७. छान्दोग्योपनिषद् ७/३.
८. अप्पा खलु मित्तं अमित्तं च सुपट्ठिओ दुपट्ठिओ। उत्तराध्ययन २०/३७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org